1 स्वस्तिक 2 श्रीवत्स 3 नंद्यावर्त 4 वर्धमानक

अष्टमंगल ऐश्वर्य

5 भद्रासन 6 पूर्णकलश 7 मीन युगल 8 दर्पण

- ईशानुग्रह

Shilp-Vidhi

शिल्पविधि प्रकाशन

जैनागम ग्रंथ, प्रकीर्णक ग्रंथ, शिल्पग्रंथ,
विधिग्रंथ, कोशग्रंथ, दिगंबर ग्रंथ, अन्य दर्शनीय
(वैदिक-बौद्ध) ग्रंथ, जैन सामयिक, शोध लेख
आदि के आधार पर उपलब्ध जैन साहित्य में
सर्व प्रथमबार शाश्वत सिद्ध अष्टमंगलो के प्रत्येक
मंगल संबंधित विस्तृत वर्णनात्मक शोध
निबंध स्वरुप शास्त्रीय संदर्भ ग्रंथ यानि

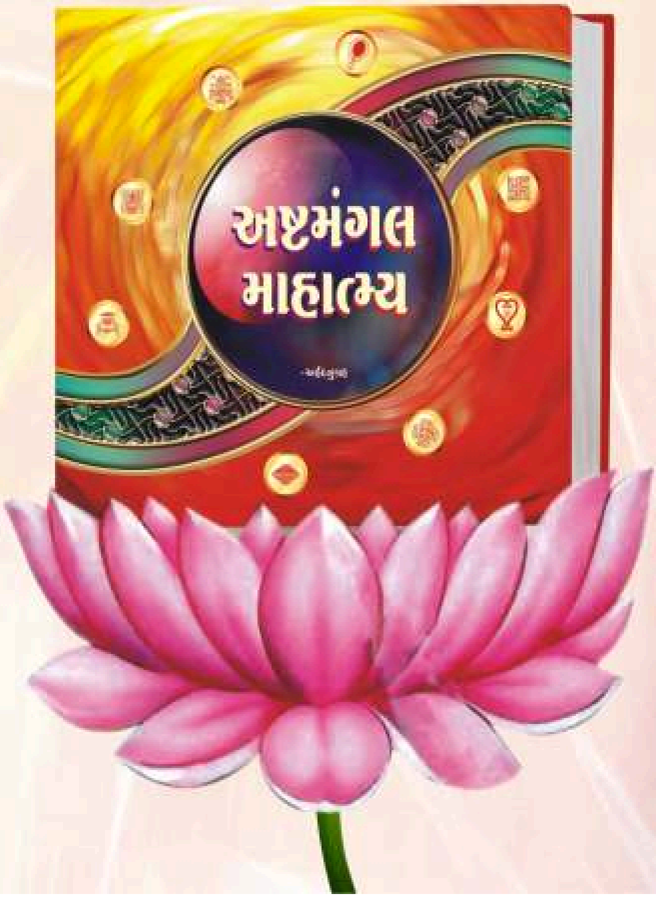

।। ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हं श्री जीराउला-शंखेश्वर पार्श्वनाथाय नमः ।।
।। श्री प्रेम-भुवनभानु-पद्म-जयघोष-हेमचंद्र-जयसुन्दर-कल्याणबोधिसूरिभ्यो नमः ।।
।। ॐ ह्रीँ ऐँ क्लीँ श्री पद्मावतीदेव्यै नमः ।।

अष्टमंगल ऐश्वर्य

: कृपावर्षाः

प.पू.सिद्धांतदिवाकर सुविशालगच्छाधिपति आ.भ.श्रीमद्विजय
जयघोषसूरीश्वरजी महाराजा

प.पू.वैराग्यदेशनादक्ष प्राचीनश्रुतोद्धारक आ.भ.श्रीमद्विजय
हेमचंद्रसूरीश्वरजी महाराजा

मेरे प्रभु के संघ की सर्वतोमुखी उन्नति हो !
मेरे प्रभु के संघ में सर्वत्र सुख और शांति हो !
मेरे प्रभु की भक्ति अर्थे अष्टमंगल वर्णना,
मेरे प्रभु ! देना मुझे वरदान एक ही मोक्ष का।

-: प्रकाशक :-

श्री जिनशासन आराधना ट्रस्ट
श्री शिल्पविधि प्रकाशन

नाम : **अष्टमंगल ऐश्वर्य**

विषय : **जिनशासन में श्रेष्ठ मंगलस्वरुपमें स्वीकृत शाश्वतसिद्ध अष्टमंगलों का सरल परिचय।**

संशोधन : प.पू. सुविशाल गच्छाधिपति **आ.भ.श्री जयघोषसूरीश्वरजी महाराजा** के शिष्यरत्न संघशासन कौशल्याधार **आ.भ. श्री जयसुंदरसूरीश्वरजी म.सा.**

आलेखन : प.पू. वर्धमानतपोनिधि **आ.भ.श्री कल्याणबोधिसूरीश्वरजी म.सा.** के शिष्य **पू. मुनिश्री सौम्यरत्न विजयजी म.सा.**

प्रथमावृत्ति : वि.सं.२०७२(**5000 गुजराती, 3000 हिन्दी**)

द्वितियावृत्ति : वि.सं.२०७३(**1000 गुजराती, 2000 हिन्दी**)

मूल्य : रु. 25/- (सर्वाधिकार सुरक्षित)

प्राप्ति स्थान : **अमदावाद :**
सिद्धांतमहोदधि श्री प्रेमसूरीश्वरजी श्रुतसदन,
पालडी : योगेशभाई–99745 87879
साबरमती : बिजुलभाई–94277 11209
84908 21546
मुंबई : श्री अक्षयभाई शाह–95945 55505

Online available at
www.shilpvidhi.org
www.jainelibrary.org

स्थायी संपर्क : **मुनि सौम्यरत्न विजय,**
C/o शिल्पविधि, श्री बाबुलालजी बेडावाले
11, बोम्बे मार्केट, रेल्वेपुरा,
अमदावाद–380002, मो. 94265 85904

मुद्रक : जैनम् ग्राफिक्स, अमदावाद

प्रकाशकीय

वि.सं.2072, पालीताणा के
ऐतिहासिक श्रमण संमेलन का प्रस्ताव नं 48

प्राय: हरेक संघो में साधारण खातें की स्थिति ऐसी होती है कि, वहाँ खर्च ज्यादा और उसके प्रमाण में आय अल्प हो । उसके द्दढ उचित उपायके रुप यह श्रमण संमेलन, सर्व गुरु भगवंतो एवं समस्त जैन संघोको मार्गदर्शन देता है कि इसी वर्ष के पर्युषणपर्व से ही प्रतिवर्ष

(1) पर्युषणा के दिनो में साधारणद्रव्य से बने हुए अष्टमंगल के अलग-अलग आठ चढ़ावें बुलवाकर सकलश्री संघ के मंगल निमित्त उसके दर्शन करवाना ।

(2) श्री कल्पसूत्र जिस राजाके लिये सर्वप्रथमबार जाहिरमें पढ़ा गया था, वे ध्रुवसेन राजा बनने का चढ़ावा भी बुलवाना और संघश्रेष्ठि बनने का चढ़ावा भी बुलवाना ।

(3) संवत्सरी महापर्व के दिन बारसासूत्र पूर्ण होते समय सकल श्री संघ को सर्वप्रथम जाहिर क्षमापना करनेका चढ़ावा भी बुलवाना ।

ये तमाम ११ चढ़ावें की रकम संपूर्ण रुप से सर्वसाधारण खाते में लेनी । उपरान्त, बारों मास के मासिक सर्व साधारण चढ़ावें, बारमासी या कायमी सर्वसाधारण फंड जैसे उपाय भी अमली करना ।

* * *

उपरोक्त प्रस्ताव के अनुसार समग्र भारत के समग्र तपागच्छीय श्री संघो में साधारण द्रव्य की वृद्धि के संदर्भ में पर्युषण पर्व के महान पवित्र दिनों में अष्टमंगल दर्शन की उछामणी/बोली का शुभारंभ हो रहा है, ऐसे पुण्यावसर पर अष्टमंगल के माहात्म्य का परिचय श्री संघ को कराने के लिए **प.पू.श्री प्रेम-भुवनभानुसूरीश्वरजी** समुदाय के प.पू.प्राचीनश्रुतोद्धारक आ.भ.**श्री हेमचंद्रसूरीश्वरजी महाराजा** के शिष्यरत्न प.पू. वर्धमानतपोनिधि आ.भ. श्री **कल्याणबोधिसूरीश्वरजी महाराजा**के शिष्य पू. मुनिराज श्री **सौम्यरत्नविजयजी** ने उपलब्ध प्राचीन स्व-पर धर्मशास्त्रों के उद्धरणों तथा संशोधनात्मक लेखों और प्राचीन-अर्वाचीन शिल्पकला के संदर्भ में अष्टमंगल माहात्म्य नाम का ग्रंथ तैयार किया है। प्रस्तुत पुस्तिका, वे सुविस्तृत ग्रंथ का लोकोपयोगी सरल भाषा में सारसंग्रह है।

श्रमण संमेलनके उपरोक्त प्रस्ताव में सर्वसाधारण द्रव्यकी वृद्धि के कर्तव्य संदर्भ में अष्टमंगलके चढ़ावे उपरांत अन्य भी शक्य उपाय अमली करने के लिये सूचन किया है। अतः **'सर्व साधारण द्रव्य वृद्धिस्थान मार्गदर्शन'** स्वरुप अन्य केचित् उपाय भी पुस्तिका के अंत में दर्शायें है। आशा है कि सकल श्रीसंघको वे सविशेष उपयोगी होंगे।

अवसरोचित अष्टमंगल परिचायक पुस्तिका आलेखक पू. मुनिराजश्री तथा प्रकाशन लाभार्थी गुरुभक्त परिवार प्रति सहृदय आभार. प्रस्तुत द्वितीयावृत्ति में मुनिश्री ने सविशेष उपयोगी सुधार किया है, जो भी आवकार्य है ।

हमारे ट्रस्टके सबल और सक्षम प्रेरणास्रोत पूज्यपाद प्राचीनश्रुतोद्धारक आ.भ.श्रीमद्विजय हेमचंद्रसूरीश्वरजी महाराजाकी पुण्यप्रेरणाके पियूषपान से प्रस्तुत पुनित प्रकाशन द्वारा श्री संघभक्ति में यत्किंचित् निमित्त बनते जीवनकी धन्यता और सुकृतकी सार्थकता का अनुभव होता है।

लि.

श्री जिनशासन आराधना ट्रस्ट की और से,

श्री चंद्रकुमारभाई जरीवाला **श्री पुंडरिकभाई शाह**

श्री ललितभाई कोठारी **श्री वनोदचंद्र कोठारी**

मांगल्यम्

सालों से जिज्ञासा रहती थी कि अष्टमंगल का जैन शासन में क्या महत्त्व होगा? जैन शासन में तो भावमंगल का ही महत्त्व होगा न ! भावमंगल तो पंच परमेष्ठि को किया गया नमस्कार है। वो तो सामान्यत: सभी जैन हररोज करते ही है, तो फिर इस अष्टमंगल का महत्त्व लौकिक है कि लोकोत्तर ? जैनेतरों में आठों मंगल का तो विधान दिखाई नहीं देता, दिखता है तो सिर्फ जैन आगम इत्यादि शास्त्रों में। ज्ञाताधर्मकथा इत्यादि अनेक अंगप्रविष्ट अंगबाह्य शास्त्रों में जगहजगह अष्टमंगल का अधिक वर्णन देखने को मिलता है– अष्टमंगल प्रासादिक है, दर्शनीय है, निर्मल है, जगमगाता है इत्यादि इत्यादि...

उपरांत, श्राद्धविधि पढ़ते वक्त श्री दशार्णभद्र के द्रष्टान्त में अष्टमंगल प्रविभक्तिचित्र नाम के नाटक का उल्लेख देखने को मिला, बहुत आश्चर्य हुआ। इस अष्टमंगल की महिमा जानने–समज़ने की अति जिज्ञासा दिल में अँगड़ाई ले रही थी। क्या होगा यह अष्टमंगल? इसके दर्शन से क्या लाभ? इत्यादि...इत्यादि...

प्रस्तुत पुस्तिका का अचूक, शास्त्र विहित लेखन करने वाले मुनिराज श्री सौम्यरत्न विजयजी के प्रति अपना आभार प्रकट करते है। उन्होंने अनेक शास्त्र ग्रंथों का अवगाहन करके यह शोधनिबंध श्री संघ को भेंट में समर्पित किया है, जिनके द्वारा मेरे जैसे अनेक जिज्ञासुओं के ज्ञानकोश में जरूर मंगलवृद्धि होगी। शिवमस्तु सर्वजगत: ।

द.

आ.वि. जयसुंदरसूरि

उत्पत्स्यते च मम कोऽपि समानधर्मा

- अष्टमंगल की पी.एच.डी. तुल्य थीसिस तैयार करने में जैसे जैसे गहराई में जातें गयें, तभी अष्टमंगल की मूलभूत जैन परंपरा, अष्टमंगल की शाश्वतता, उसका शाश्वतसिद्ध क्रम, उसकी ८ या ६४ की संख्या, उसका पूजन नहीं लेकिन आलेखन, उसके विसर्जन में दोषाभाव इत्यादि अनेक नवीन पदार्थों के बारे में जानकारी मिलती गई। वो सभी स्व पर धर्मशास्त्रों की प्ररूपणाएँ तथा शिल्पकला के प्राचीन द्रष्टांतों का अष्टमंगल माहात्म्य (सर्वसंग्रह) नाम के ग्रंथ में विस्तार से निरुपण किया गया है। जिज्ञासु एक बार उसका अवगाहन जरुर करें।
- यंत्रविज्ञान के अनुसार, प्रत्येक आकार एक यंत्र है, और उसकी खुदकी एक पोज़िटीव या नेगेटीव ऊर्जा होती है, वायब्रेशन होते है। अष्टमंगल के शुभ मांगलिक आकार पोज़िटीव ऊर्जा से भरपूर है। स्वस्तिक के बारे में तो इस संदर्भ में बहुत कुछ संशोधन किया गया है, ग्रंथो का भी लेखन किया गया है, तथा कई के अनुभव भी है। अन्य सातों मांगलिक आकारों के बारे में भी ऐसा संशोधन होना जरूरी है।
- आज, बहुत सारे जैन, जमीन चेकींग जैसे ऊर्जा-ओरा रेकी-वायब्रेशन की फ्रिक्वन्सी नापना इत्यादि फिल्ड में कार्यरत हैं। वें भी इस बारे में प्रयत्न कर सकते है। इसके द्वारा अष्टमंगल का शाश्वत क्रम इस तरह ही क्यों- उसका भी रहस्य बाहर आ सकता है। अष्टमंगल की सृष्टि के पाँच तत्व या नौ ग्रह के साथ के अनुसंधान की दिशा में भी विचारणा हो सकती है। जैसे की, जलपूर्ण कलश, पृथ्वी तत्व और जल तत्व का प्रतिनिधित्व करें, १२वीं मीन राशि गुरु ग्रह की होने से मीनमंगल और गुरुग्रह के पारस्परिक संबंध की विचारणा, इत्यादि...
- प्रबुद्ध चिंतक अष्टमंगल की, ८ कर्म-८ योग के अंग, ८ योगद्रष्टि इत्यादि अष्ट संख्यात्मक पदार्थों के साथ के तुलनात्मक, अनुसंधानात्मक चिंतन कर के नूतन उत्प्रेक्षाएं श्रीसंघ में प्रस्तुत कर सकतें हैं।
- कवित्व शक्ति संपन्न पुण्यात्माओं अष्टमंगल विषयक स्तुति इत्यादि नूतन रचनाएँ कर सकतें हैं।
- जैसे जैसे समय बीतता जायेगा, कुदरत के क्रम में ऐसा कार्य

भी होगा। इस के लिए योग्य समय पर योग्य महात्मा या व्यक्ति, श्री संघ के पुण्यबल पर मिल जायेंगे ऐसी हार्दिक संवेदना और आंतरिक विश्वास है।

* पूज्यपाद सुविशाल गच्छाधिपति आ.भ.श्रीमद्विजय जयघोषसूरीश्वरजी महाराजा के शिष्यरत्न संघशासनकौशल्याधार तर्कनिपुण आ.भ.श्रीमद्विजय जयसुंदरसूरीश्वरजी महाराजाने प्रस्तुत पुस्तिका का संशोधन कर के उसकी प्रामाणिकता में विशेष वृद्धि की है, इस के लिए मैं उनका ऋणी हुँ।

* पूज्यपाद गच्छाधिपतिश्रीके **आषाढ वदि-2,** वि.सं. २०७३ के ८२वें जन्मदिन निमित्त पूज्यश्री सहित सकलश्री संघ के करकमलमें प्रस्तुत द्वितीयावृत्ति पुस्तिका पुष्प समर्पित करतें धन्यता अनुभूत होती है। जिनाज्ञाविरुद्ध कुछ लिखा गया हो तो मिच्छामि दुक्कडम्।

आषाढ वदि-2, वि.सं. २०७३, **-मुनि सौम्यरत्न विजय**
३८वाँ जन्मदिन, साबरमती, अहमदाबाद

मथुराप्राप्त २००० वर्ष प्राचीन अष्टमंगलयुक्त आयागपट्ट

अष्टमंगल दोहे

अष्टमंगल का आलेखन एवं श्री संघ को दर्शन
कराते वक्त निम्नोक्त दोहे बोल सकते है ।

अ. अष्टमंगल

अष्टमंगल के दर्श से, श्रीसंघका उत्थान ।
विघ्न विलय सुख संपदा, मिले मुक्ति वरदान ।।

1. स्वस्तिक :

धर्म चार स्वस्तिक वदे, दान-शील-तप-भाव ।
चार गति के नाश से, प्रगटे आत्म स्वभाव ।।

2. श्रीवत्स :

श्रीदाता श्रीवत्स की, महिमा अपरंपार ।
ऋद्धि वृद्धि सुमति दीये, अक्षय गुण भंडार ।।

3. नंद्यावर्त :

चरमावर्त चरम शरीर, चरम जन्म उपहार ।
नंद्यावर्त प्रभाव से, सीमीत हो संसार ।।

4. वर्धमानक :

विद्या विनय विवेक का, वैभव हो वर्धमान ।
वर्धमानक से पुण्य बल, कीर्ति यश सन्मान ।।

5. भद्रासन :

भद्रासन मंगल करे, दर्श से दुरित विनाश ।
भद्रंकर कल्याणकर, आतम ज्ञान प्रकाश ।।

6. पूर्णकळश :

पूर्णकलश से पूर्णता, दूर हो जाय विभाव ।
हृदय कलश शुभ भाव जल, पूरण आत्म स्वभाव ।।

7. मीनयुगल :

प्रीत प्रभु से मैं करुं, नीर संग ज्युँ मीन ।
पर से नाता तोड के, चित्त प्रभु में लीन ।।

8. दर्पण :

दर्प न हो उत्कर्ष का, अर्पण का परिणाम ।
दर्पण में दर्शन करूँ, निर्मल आतमराम ।।

✻ प्रेम-भुवनभानुकृपा, सूरि जय हेमाशिष ।
अभय अनंत पद में नमें, नित संस्कार का शीष ।।

।। ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हं श्री जीराउला-शंखेश्वर पार्श्वनाथाय नमः ।।

।। श्री प्रेम-भुवनभानु-पद्म-जयघोष-हेमचंद्र-जयसुन्दर-कल्याणबोधिसूरिभ्यो नमः ।।

।। ॐ ह्रीँ ऐँ क्लीँ श्री पद्मावतीदेव्यै नमः ।।

अ. अष्टमंगल

अ-1 मंगलं...मंगलं...तथास्तु !

व्यक्ति की श्रद्धा जीवन के अनेक प्रसंग पर, अनेक स्वरूप में प्रकट होती है। जिनालय-उपाश्रय के खातमुहूर्त-शिलान्यास, जिनबिंब प्रतिष्ठा, प्रभुप्रवेश जैसे धार्मिक अवसर हो या तो पुत्र परीक्षा देने के लिए या परदेश अभ्यासार्थे जा रहा हो, कन्या ससुराल जा रही हो, बहु प्रसूति के लिए मायके जा रही हो, नये घर में कलश रखना हो, नया व्यवसाय या नयी दुकान की शुरूआत करनी हो अथवा शादी जैसे सांसारिक अवसर हो, कोई भी ऐसा कार्य निर्विघ्न और अच्छी तरह संपन्न हो, ऐसी सभी के मन की इच्छा-भावना होती है। इस के लिए शुभ मुहूर्त देखते है और मांगलिक उपचार भी किया जाता है।

शुभ अवसर पर गुड़, धनिया या गुड़मिश्रित धनिया, दहीं, कंसार, लापसी, सुखडी, पेंड़ा इत्यादि खाने-खिलाने का रिवाज है। इन सभी खाद्य द्रव्यों को मंगल माना गया है। परीक्षा देने जाते वक्त सगुन के तौर पर, विघ्ननाश और कार्यसिद्धि की भावना से

खाये-खिलायें जातें हैं, यह एक मांगलिक उपचार है। कोई शुभ कार्य के लिए घर से निकलते समय सामने आकस्मिक कोई गाय या हाथी आ जाएं तो वे अच्छे सुगुन माने जाते है। वरघोडे में बहनें सिर पर कलश(गागर-घड़ा) ले कर गुरु भगवंत के सामने आती हैं वो भी इस स्वरुप का ही मंगलविधान है।

शुभ मंगल के लिए प्रत्येक की श्रद्धा की मात्रा भी तो अलग-अलग होती है, और मंगल की रुचि भी प्रत्येक की अलग-अलग होती है। भगवान का या अपने इष्ट देव-देवी का दर्शन-वंदन करने के बाद, या फिर उनका मंत्रजाप करके ही कार्य की शुरुआत करने वाले भी हमारी आसपास देखने को मिलेंगे।

वैसे भी, आज व्यक्ति अनेक प्रकार के अपमंगलो से घिरा हुआ है। कभी आर्थिक विटंबणा तो कभी शारिरीक, मानसिक आधि-व्याधि-उपाधि-अशांति-असमाधि और संक्लेश के निमित्त डग डग पर जीव को हेरान-परेशान कर देते है । कभी कभार आकस्मिक आपत्ति में आदमी उलझ जाता है । ऐसी परिस्थिति में व्यक्ति अतीन्द्रिय सहाय की इच्छा करता है । अपमंगल को दूर करे ऐसे मंगल की शरण में जाने की इच्छा करता है, जाता है।

अ-2 मंगल अर्थात् ? ? ?

मंगल का सीधा सरल अर्थ है, जिनसे हमारा कल्याण हो वही मंगल । मंगल यानी शुभ, पवित्र, पापरहित, विघ्नविनाशक पदार्थ या व्यक्ति।

जो विघ्नों का विनाश करे वो मंगल । जो चित्त को प्रसन्न करें वो मंगल ।

जो इच्छित कार्यसिद्धि करायें वो मंगल । जो सुख की-पुण्य की परंपरा का विस्तार करें वो मंगल।

जो जीवन में धर्म को खिंच लाये वो मंगल ।

हस्तप्रतो में अष्टमंगल सुशोभन

जो जीव को संसार से मुक्ति दिलाये वो मंगल और जिसके द्वारा पूजा हो वो भी मंगल।

अ-3 मंगलः अनेक स्वरूप में-अनेक प्रकार में

अरिहंत परमात्मा सर्वोत्कृष्ट मंगल स्वरुप है। उनका नाम स्मरण, जप, जिनप्रतिमा तथा 8 प्रातिहार्य भी मंगल है। प्रभुमाता को आये हुए 14 स्वप्न तथा जिनपूजा के उपकरणें भी मंगलस्वरुप है।

स्वप्नशास्त्र में दिखाएं गये 14 महास्वप्न, विविध शुभ मुद्राएं, चैत्यवृक्षादि कुछ वृक्ष इत्यादि भी मंगलस्वरुप है। मनुष्य के शरीर में विशेष कर हाथ-पाँव के तलवें में भिन्न-भिन्न रेखाओं की आकृतिओं को देखा जाता है। महापुरुष के शरीर में 32 उत्तम चिह्न और 80 लघु चिह्न थोड़ी-बहुत मात्रा में देखने को मिल सकतें हैं, जो भी मंगलस्वरुप है।

श्री जीराउला पार्श्वनाथ

मंगल व्यक्तिरुप या खाद्यपदार्थ रुप भी होता है । फल या घासरुप, वार्जित्र या पक्षी के ध्वनि स्वरुप भी होता है, वैसे मंगल आकृति स्वरुप भी होता है।

अष्टमंगल मे स्वस्तिक, श्रीवत्स, नंद्यावर्त और मीनयुगल आकृति मंगल स्वरुप है। वर्धमानक, भद्रासन, पूर्णकलश और दर्पण आकृतिमंगल होते हुए वस्तुमंगल भी है।

मंगल अनेक स्वरुप में और अनेक प्रकार में होता है फिर भी यहां हम अष्टमंगल के विषय में विचारणा करेंगे।

अ-4 अष्टमंगल की मौलिक जैन परंपरा :

मांगलिक प्रतीकों का उल्लेख प्रत्येक धर्म की परंपरा में तथा लौकिक ग्रंथों में भी है। लेकिन, अनेक मांगलिक प्रतीकों में से निश्चित आठ मंगलों की अष्टमंगल जैसी गिनती सब से पहले जैनागम ग्रंथो में ही है। बाद में, अन्य धर्मोने भी अपने तरीके से अपने आठ मंगल की जानकारी दी।

ऐसे ही, शिल्पकला में भी सब से पहले अष्टमंगल का सामूहिक उत्कीर्णन दो हजार वर्ष पुराने मथुरा से प्राप्त जैन आयागपट्ट में ही देखने को मिलता है। जिसका चित्र प्रारंभमें दिया गया है।

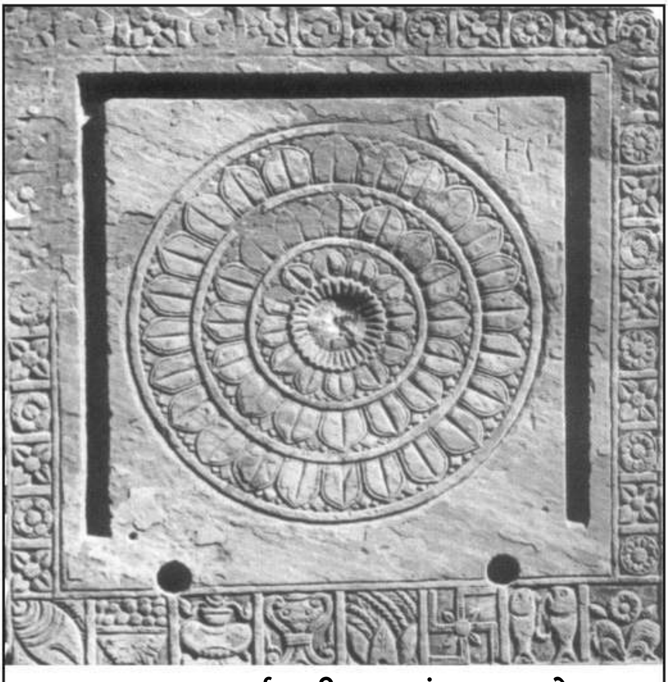

मथुराप्राप्त 2000 वर्ष प्राचीन अष्टमंगलयुक्त चोरस छत्र

कुंभारीया के हजार वर्ष प्राचीन शांतिनाथ जिनालय की द्वारशाख पर सामूहिक अष्टमंगल का अंकन देखा जाता है।

प्राचीन जैन हस्तप्रतों की बोर्डरो में भी सुशोभन के हेतु किया गया अष्टमंगल देखने को मिलता है।

श्वेतांबर संप्रदाय में आज तक उसका चलन रहा है। श्वेतांबर साधु-साध्वीजी भगवंतो के ओघे में(रजोहरणमें) मंगल स्वरुप में अष्टमंगल आलेखन की परंपरा है। श्रावकों के घरों की द्धारशाख पर अष्टमंगल की पट्टीयां या स्टीकर लगाने का भी बहुत चलन है।

प्रायः प्रत्येक जिनालयों में जिनपूजा के उपकरण स्वरूप अष्टमंगल की पाटली जरुर देखने को मिलेगी। 24 तीर्थंकर भगवंतो के जो 24 लांछन कहे जाते है, इस में 4 लांछन ऐसे हैं जिसकी गिनती अष्टमंगल में भी है, जैसे कि, सातवें सुपार्श्वनाथ-स्वस्तिक लांछन, दशवें शीतलनाथ-श्रीवत्स लांछन, अठारवें अरनाथ-नंद्यावर्त लांछन, उन्नीसवें मल्लिनाथ-कुंभ लांछन।

अ-5 आगमो में अष्टमंगल का शाश्वतसिद्ध क्रम :

श्री रायपसेणीय सूत्र, श्री औपपातिक सूत्र, श्री जीवाजीवाभिगम सूत्र, श्री जंबूद्धीपप्रज्ञप्ति, श्री ज्ञाताधर्मकथा, श्री भगवती सूत्र आदि आगमों में भिन्न-भिन्न संदर्भ में कई बार अष्टमंगल का उल्लेख हुआ है।

श्री विजयदेव और श्री सूर्याभदेव, शाश्वत जिनप्रतिमा की पूजा अंतर्गत प्रभु समक्ष अष्टमंगल आलेखतें हैं। देवलोक के विमानों के तोरणों में, जहां परमात्मा की दाढाएं स्थित होती है, वो माणवक स्तंभ पर, सिद्धायतनों-शाश्वत जिनालयों की द्धारशाख पर अष्टमंगल होतें हैं। चक्रवर्तीओं चक्ररत्न की पूजा करते वक्त चक्ररत्न समक्ष अष्टमंगल का आलेखन करतें हैं।

इन सभी उल्लेखों से सिद्ध होता है कि अष्टमंगल श्वेतांबर मान्य आगमों के आधार पर शाश्वत है।

उपरांत, अन्य महत्त्व की बात यह है कि इस अष्टमंगल का क्रम भी शाश्वत है। आगमों में जहां भी अष्टमंगल का निरुपण है वहां एक समान क्रम का ही पाठ है।

जमाली या मेघकुमार के तथा परमात्मा की दीक्षा के वरघोडे में भी शिबिका के आगे अष्टमंगल होते है। और वे भी **'अहाणुपुव्वीए'** अर्थात् प्रत्येक मंगल आगे-पीछे या अव्यवस्थित नहीं लेकिन यथाक्रम से ही होते है।

अष्टमंगल का **शाश्वत सिद्ध आगमिक क्रम** इस प्रकार हैः

तं जहा-सोत्थिय-सिरिवच्छ-नंदियावत्त-

वद्धमाणग-भद्दासण-कलश-मच्छ-दप्पण।

(1)स्वस्तिक, (2)श्रीवत्स, (3)नंद्यावर्त, (4)वर्धमानक, (5)भद्रासन, (6)कलश, (7)मीनयुगल, (8)दर्पण.

अ-6 अष्टमंगल यात्रा :

आलेखन से पाटला-पाटली तक

अष्टमंगल रजतपट्टिका

जिनपूजा देवलोक की हो या मनुष्यलोक की, जिनपूजा में जिनप्रतिमा समक्ष अष्टमंगल के आलेखन की ही बात ग्रंथों में है तथा व्यवहार में भी प्रचलन में है।

अंजनशलाका जैसे विधानोमें 15वीं सदी तक शुद्ध गौबरयुक्त भूमि पर ही अष्टमंगल का आलेखन होता था। 16वीं सदी से पाटले पर आलेखन शुरु हुआ। 19वीं सदी से प्रायः करके सभी विधि-विधानो में अष्टमंगल पाटला आवश्यक तौर पे शुरु हुआ जिस के उपर अष्टमंगल आलेखन होता रहा। ✻

अष्टमंगल आलेखन में देर होती है, सभी से होता भी नहीं, इसलिए अष्टमंगल के आकार में नक्काशी किए हुए तैयार पाटला विधिविधान में अमलीकरण में आये।

नित्य दैनिक पूजा में जिनप्रतिमा समक्ष अक्षत से अष्टमंगल का आलेखन होता था। इन में सभी से होता भी नहीं और करने में देर भी होती है, इसलिए अष्टमंगल के आकार में नक्काशी किए हुए तैयार पाटला जिनपूजा की सामग्री स्वरुप में आएं। उनमें अक्षत भर दो फिर अष्टमंगल तैयार हो जाता है। जिनमंदिरो में अष्टमंगल नक्काशी किया हुआ पाटला तैयार रखा जाता था। आज भी कुछ पुराने मंदिरो के तहखाने में ऐसे संभाल कर रखे गये पाटले देखने को मिल सकते है।

✻ टीप्पणी : ये आलेखित अष्टमंगल का विसर्जन करने में जीवहिंसा आदि कोई दोष लगता नही।

हररोज पाटला पर अष्टमंगल का आलेखन करने के बजाय पंचधातु की अष्टमंगल की पाटली बना कर प्रभु समक्ष रखें तो कैसा रहेगा? ऐसा विचार किसी के मन में आया होगा, और क्रमशः पाटला निकलता गया और पाटली का चलन आज सर्वव्यापी हो गया। इस पाटली पर केसर का अर्चन करना शुरु हुआ।

इस तरह, पाटली प्रभु के आगे रख कर उसे केसर से अर्चन करने में आलेखन की भावना चढकर पूजन की भावना उपस्थित होती है। वास्तव में, अष्टमंगल का आलेखन ही होता है, पूजन नहीं, इसलिए कितनेक जिनालयो में भंडार पर जहां दर्पण, चामर, धूप-दीप रखें जाते हैं वहां पर ही अष्टमंगल की पाटली, जिनपूजा के उपकरण स्वरुप में ही रखी जाती है। इस पाटली को हाथ में धारण कर के प्रभु समक्ष खड़े रहकर से आलेखन की भावना हृदय में उपस्थित होती है।

अ-7 अष्टमंगल दर्शन-श्रीसंघ का मंगल :

अष्टमंगल, आठ शुभ मांगलिक आकार होते हैं। कोई भी कार्य के प्रारंभ में, प्रयाण समय पर, नूतन वर्ष के प्रारंभ में या शुभ पवित्र दिनों में उसका दर्शन विघ्ननाशक और कार्यसाधक माना जाता है। सकल श्री संघ के आनंद-मंगल, क्षेम-कुशल की भावना से योग्य समय पर सकल श्री संघ को उसका दर्शन कराना भी उचित ही होगा।

आगमों में जहां अष्टमंगल का निरुपण किया गया है, वहां कहा गया है कि- इस मांगलिक आकारों के दर्शन से चित्त में संतोष की भावना उत्पन्न होती है। इन आकारों को कोई साधारण न समज़े। वे उद्धेग दूर कर के मन को शांति और प्रसन्नता प्रदान करतें हैं।

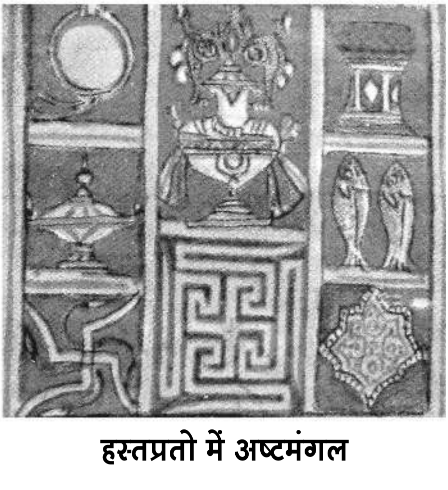

हस्तप्रतो में अष्टमंगल

इस मंगल का दर्शन बारबार करना अतियोग्य माना गया है, क्युंकी वो पूरे विश्व में विशिष्ट एवं असाधारणीय है। हर किसी को बारबार देखने को मन होवे ऐसे आकारमय है। नेगेटीवीटी के कारण अगर चित्त अप्रसन्न या डिप्रेशन में रहता हो वहां पर ईन आकारों की पोझीटीवीटी मन को स्वस्थता प्रदान करती है । किसीभी कार्यसिद्धि हेतु ये आकार पोझीटीव उर्जा प्रदान करते है। जिन जिन स्थानों पर ईसका आलेखन, एनग्रेवींग, चिपकाना/लसना हुआ वहाँ पर अष्टमंगल समग्र वायुमंडल/वातावरण की नकारात्मक/ऋणात्मक उर्जा दूर करके शुभ उर्जा बढाता है।

अ-8 अष्टमंगल कहां कहां कर सकतें हैं ?

जिनप्रतिमा की तरह गुरु समक्ष भी, गहुंली में अष्टमंगल आलेखन भी कर सकते है।

प्रतिष्ठा-प्रभुप्रवेश, उपधानमाल, चातुर्मास प्रवेश का सामैया इत्यादि अनेक अवसरों की रथयात्रा में अष्टमंगल रचना कर सकतें हैं।

उपाश्रय, घर इत्यादि स्थानों की द्वारशाखाओं पर अष्टमंगल कर सकतें हैं। जिनालयों की शिल्पकला में द्वारशाख, छत इत्यादि योग्य स्थान पर अष्टमंगल का उत्कीर्णन हो सकता है।

अ-9 अष्टमंगल संदेश :

(1)**स्वस्तिक :** सांसारिक चार गति के सूचक स्वस्तिक की चार पंखुडियाँ, चार प्रकार के धर्म की आराधना द्वारा जीव को संसार सागर से तैरने का संदेश देती है।

(2)**श्रीवत्स :** तीर्थंकरोके हृदयस्थान में स्थित श्रीवत्स, उनके हृदय में बसे विश्व के समस्त जीवो प्रति निष्काम करुणा-प्रेम को सूचित करता है। और अपने जीवनमें जीवो प्रति द्वेषभाव आदि दूर कर सर्व जीव प्रति मैत्रीभाव का उपदेश देता है।

(3)**नंद्यावर्त :** मध्य की धरी द्वारा गोल गोल फिरने का भाव सूचित करता नंद्यावर्त, जीव को सतत आध्यात्मिक आत्मोन्नति के मार्ग पर हिंमत हारे बिना, धीरज खोए बिना प्रगतिशील अग्रेसर रहने का संदेश देता है।

(4)वर्धमानक : किसी भी चीज को नियंत्रित-अनुशासित करता संपुटाकार वर्धमानक, सतत भ्रमणशील मनको परमात्मा के आलंबन से ध्यानादि साधना द्वारा स्थिर करने का संदेश देता है ।

(5)भद्रासन : उत्तम पुरुष, उत्तम आसन पर बिराजमान होते हुए भी, अपने पद का दुरुपयोग नही करते और मनमें अहंकारादि भाव भी नही लाते, वैसे ही हमको भी पुण्यसंयोग से पद-प्रतिष्ठा प्राप्त होने पर उसका दुरुपयोग नही करना और अहंकार भी नही करना ऐसा संदेश भद्रासन देता है।

(6)पूर्णकलश: महामंगलकारी और पूर्णता का सूचक ऐसा मंगलकलश, मांगलिक कार्य अधूरे न छोडते हुए पूर्णरुप से करने का संदेश देता है। मंगलकारी धर्म की आराधना द्वारा पूर्णानंद स्वरुप मोक्ष प्राप्ति का ये सूचक है ।

(7)मीनयुगल: मछली सच्चे प्रेम का प्रतीक है। जो सदा हृदय को निष्छल एवं निष्कपट बनाने की प्रेरणा देती है । मछली सदा जल प्रवाह से विपरीत दिशा में गति करती है, जो भी हम को संसार प्रवाह से विरुद्ध गति करके अनादिकालीन कर्मयुक्त आत्मा को शुद्ध एवं सिद्ध बनाने की प्रेरणा देती है।

(8)दर्पण : हमारा हृदय दर्पण की तरह स्वच्छ एवं निर्मल बने, उसमें परमात्मा का वास हो ऐसी प्रेरणा दर्पण देता है। और, दर्पण सदा प्रकाश का ही परिवर्तन करता है, अंधकार का नहि, उस तरह हमारा जीवन भी दूसरों के उपकारों एवं सद्गुणों का ही परावर्तन करनेवाला हो, अवगुण-दोषो का नहि, ऐसा संदेश दर्पण देता है।

1.स्वस्तिक

हे प्रभु ! आपके जन्म से, तीनों लोक में स्वस्ति यानी कल्याण होता है, इसलिए तो आपके समक्ष स्वस्तिक का आलेखन करतें हैं।

1.1 अष्टमंगल का सब से पहला मंगल है स्वस्तिक :

उसका आगमिक शब्द है सोत्थिय या सोवत्थिय। जिससे

गुजरातीमें 'साथियो' शब्द प्रचलित हुआ। सातवें सुपार्श्वनाथ भगवान का लांछन भी स्वस्तिक ही है।

जो मंगल-कल्याण करें वह स्वस्तिक।

जो पाप का विनाश करें वह स्वस्तिक।

जो पुण्य का विस्तार करें वह स्वस्तिक।

स्वस्तिक में मांगलिकता, सुख, आनंद, कल्याण, सुरक्षा और व्यापकता का सुभग संगम है।

1.2 जनसामान्य में स्वस्तिक का चलन :

धार्मिक या सामाजिक, कोई भी मांगलिक अवसर पर घर, मंदिर इत्यादि के प्रवेशद्वार पर स्वस्तिक किया जाता है। गृहप्रवेश के मंगल अवसर पर साथिया के द्वारा घर में यश-कीर्ति-धन-समृद्धि की वृद्धि होगी ऐसा विश्वास व्यक्त किया जाता है।

कई स्थान पर नित्य या पर्व के दिन आँगन स्वच्छ करने के बाद 3 या 5 साथिया के आलेखन द्वारा मंगल किया जाता है।

दिपावली के चोपडापूजन में साथिया के द्वारा मंगल किया जाता है। नयी गाडी या नया वाहन खरीदारी के समय भी मंगल भावना व्यक्त करने के लिए साथिया किया जाता है।

घरों में मंगल प्रसंग पर 'साथिया पूरावो आज...दीवडा प्रगटावो रे...' इत्यादि गीतों के द्वारा भी साथिया आलेखन कर के आनंद मंगल की अभिव्यक्ति व्यक्त की जाती है।

हररोज सुबह जिनालयो में स्नात्र के त्रिगडा में भगवान पधरावनी पूर्व प्रथम साथिया का आलेखन किया जाता है।

जीवन व्यवहार के अनेक विषयो में जाने-अनजाने में भी साथिया का अति प्रचलन रहा है। मकानों में झरोखा इत्यादि की रेलींग में, देहली पर के स्टीकरों में, हाथ के ब्रेसलेट में, गले के पेंडेंट में, सारी या चद्दर की डिज़ाइन में इत्यादि जैसे विविध अनेक स्थान पर साथिया का मुक्त उपयोग दिखाई देगा।

1.3 स्वस्तिक के अनेक अर्थ :

स्वस्तिक के अनेक अर्थ अनेक तरीके से किये गये है। उसकी चार पाँख को कोई भी चार पदार्थ के प्रतिनिधि रुप मान कर इस में से कोई भी शास्त्र या व्यवहार अबाधित अर्थ का विचार किया जा सकता है, जो किसी न किसी शुभ संदेश या प्रेरणा सूचित करता हो।

जैन परंपरा में स्वस्तिक की चार पँखड़ी, चार गति को सूचित करती है। इन चार गति के चक्कर में से मुक्त हो कर तीन रत्न(सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यग्चारित्र)की आराधना करके सिद्धशिला में हमें स्थिर होना है, ऐसी भावना के साथ पूजा में अक्षत के द्वारा प्रभु समक्ष स्वस्तिक,3 ढेरी और सिद्धशिला का आलेखन किया जाता है। उपरांत, स्वस्तिक की चार पाँख; दान, शील, तप और भाव, ये चार प्रकार के धर्म को भी सूचित करती है।

वैदिक परंपरा में स्वस्तिक; चार पुरुषार्थ, चार वेद, चार युग तथा चार आश्रम का प्रतीक भी माना गया है।

वास्तुशास्त्र अनुसार स्वस्तिक की चार मुख्य रेखा, चार दिशा और उसकी चार पाँख चार विदिशा को सूचित करती है।

1.4 अत्यंत ऊर्जासभर स्वस्तिक :

प्रत्येक व्यक्ति या पदार्थ की तरह प्रत्येक आकार की भी अपनी ऊर्जा होती है। पूर्ण आकार-प्रमाण सहित के स्वस्तिक में लगभग 1 लाख बाईस जितनी शुभ पोजिटीव ऊर्जा होती है। वास्तुशास्त्रीओ स्वस्तिक के प्रयोग द्वारा अनेक सकारात्मक आश्चर्यजनक परिणाम प्राप्त करते है।

1.5 अक्षत द्वारा स्वस्तिक(तथा अन्य) मंगल आलेखन :

अक्षत(चावल)द्वारा आलेखन करने के 3 कारण (बजह) :

(1)अक्षत उज्ज्वल वर्ण का धान्य है, जिस के द्वारा आत्मा को अपनी कर्मरहित उज्ज्वल अवस्था का ख्याल रहे।

(2)अक्षत (चावल), सर्वत्र देश-काल में सुलभ द्रव्य है।

(3)अक्षत एक ऐसा धान्य है जो बोने से भी फिर से उगता नहीं। प्रभु समक्ष स्वस्तिक(और अन्य)आलेखन करने से फिर से संसार में जन्म-मरण नहीं करना पडे ऐसा भाव अक्षत के द्वारा व्यक्त होता है।

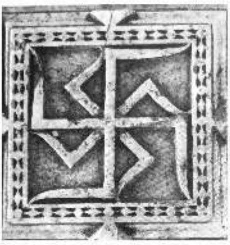

900 वर्ष प्राचीन कुंभारीया के जिनालय के भोंयतळिये में स्वस्तिक का अद्भुत शिल्प

2.श्रीवत्स

हे प्रभु! आपके हृदय में रहते परम(केवल)ज्ञान ही मानो श्रीवत्स के बहाने बाहर प्रकट हुआ है...उसको मेरा लाख लाख वंदन!!!

2.1 अष्टमंगल का दूसरा मंगल है श्रीवत्स :

10वें शीतलनाथ भगवान का लांछन भी श्रीवत्स ही है।

जिनप्रतिमा की छाती में बीच में जो उभार का भाग दिखता है वह है श्रीवत्स । शाश्वत जिनप्रतिमाओं के आगमिक वर्णन में भी छाती में श्रीवत्स होना कहा गया है। तीर्थंकरों की छाती के मध्य भाग में बाल का गुच्छा एक विशिष्ट आकार धारण करता है, उसे श्रीवत्स कहते है। तदुपरांत, चक्रवर्तीओं एवं वासुदेवों को भी छाती के मध्य भाग में श्रीवत्स होता है ।

श्रिया युक्तो वत्सो वक्षोऽनेन श्रीवत्सः-रोमावर्तविशेषः। (अभिधानचिंतामणि-2/136)

जैन परंपरामें श्रीवत्स के दो स्वरुप प्रचलित है। पहला स्वरुप विक्रम की पांचवीं या नवीं सदी तक प्रचलित रहा, जिसे हम प्राचीन श्रीवत्स कहेंगे। उसके बाद प्रचलित हुए श्रीवत्स को हम अर्वाचीन/आधुनिक श्रीवत्स कहेंगे।

2.2 प्राचीन श्रीवत्स :

अर्थ और आकार :

श्री अर्थात् लक्ष्मी। श्रीवत्स अर्थात् लक्ष्मी देवी का कृपापात्र पुत्र । यह श्रीवत्स ऐश्वर्य, विभूति, शोभा, संपन्नता, संपत्ति, समृद्धि, सुख, सर्जन आदि का प्रतीक है। प्राचीन श्रीवत्स की आकृति, पुरुष की आकृति से मिलतीजुलती है। पालथी लगा कर बैठा हुआ कोई पुरुष, अपने दोनों हाथों से गला या कंधे को स्पर्श करता हो, ऐसे स्वरुप का श्रीवत्स प्राचीन में दिखाई देता है। जो कि, वो आकृति में भी कालक्रम अनुसार सामान्य सामान्य परिवर्तन हुआ है। कालान्तर में वह आमने सामने फन उठाये हुए

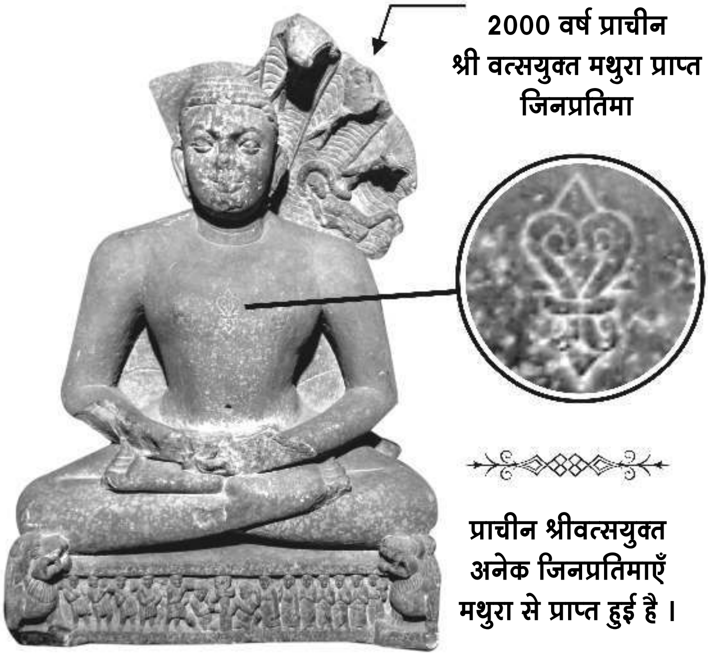

प्राचीन श्रीवत्सयुक्त अनेक जिनप्रतिमाएँ मथुरा से प्राप्त हुई है ।

नागमिथुन स्वरूप भी हुआ। मथुरा श्रीवत्स और भी विशेषरूप में देखा जाता है।

2.3 प्राचीन जिनप्रतिमा तथा शिल्पकला में श्रीवत्स :

प्राचीनकाल से जिनमूर्तिविधान में छाती में श्रीवत्स करने के शास्त्रपाठ मिलते है।

मथुरा के खुदाई काम में सैंकडों जैन प्राचीन अवशेष मिलें हैं, जिन में 31 जितनी जिनप्रतिमाएं तथा आयागपट्ट प्राप्त हुए है। यहां की बहुत सारी जिनप्रतिमाओं के वक्षस्थल पर प्राचीन श्रीवत्स दिखाई पड़ता है। श्रीवत्स का सब से प्राचीन स्वरुप मथुरा की जिनप्रतिमाएं तथा आयागपट्ट में ही देखने को मिलता है। आयागपट्ट में जहां अष्टमंगल का आलेखन है वहां श्रीवत्स का स्पष्ट सुंदर स्वरूप दिखाई पडता है।

वसंतगढ़ शैली की 8 से 10वीं सदी की कुछ जिन प्रतिमाओं में भी प्राचीन स्वरुप के श्रीवत्स होते थे। ऐसी प्रतिमा राजस्थान के पींडवाडा गांव में देखने को मिलती है।

उपरांत, महामेघवाहन राजा खारवेल के हाथीगुफा के जैन शिलालेख में तथा प्राचीन पदचिह्न में भी प्राचीन श्रीवत्स के बहुत उदाहरण देखने को मिलते है।

2.4 अर्वाचीन श्रीवत्स :

पांचवीं या नवीं सदी से ले कर जिन प्रतिमा के वक्षस्थल पर

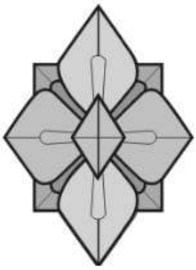

असमकोण चतुर्भुज या सरल भाषा में सक्करपारा ◆ जैसा आकार वाला श्रीवत्स देख सकते है। इस स्वरुप में अचानक क्यों बदलाव आ गया वह संशोधन का विषय है। लेकिन, तब से ले कर आज तक अर्वाचीन श्रीवत्स ही होते आयें हैं। उपरांत, उसके स्वरुप में भी सामान्य बदलाव होता रहा है।

छठवीं से दसवीं सदी तक की प्रतिमाओं में छाती के भाग पर थोड़ा सा घाव कर के श्रीवत्स को थोडा उभार दिया जाता था। लगभग 31'' की प्रतिमा के लिए सोचें तो 11 से 13वीं सदी में सामान्य 2-3 इंच तक उभारा गया श्रीवत्स दिखाई देता है। इस समय में शिल्पकारोंने उसे अंलकृत बनाया। उसमें कमलपत्र और परागपुष्प या मोतीओं की भी आकृति बनती थी।

15-16वीं सदी में और बाद में बनाई गई प्रतिमाओं में श्रीवत्स एक-सवा इंच जितना बड़ा उभारने की शुरूआत हुई। लेकिन वास्तव में उसका इतना ज्यादा उभार सोचनीय बाबत है। हमारे यहां तो उसके पर चांदी की परत चढ़ाके उसे ज्यादा उभारने की कोशिश की जाती है वो कितना उचित माना जाए वो विद्वान समझ पाएंगे !

वर्तमान में बनाई गई जिनप्रतिमाओं में तथा अष्टमंगल की पाटलीओं में अर्वाचीन श्रीवत्स देखे जाते है।

2.5 श्रीवत्स मान्यता :

श्री श्वे.मू.पू. जैन संघ में जिनप्रतिमाओं के दृष्टांत और शास्त्रपाठों के आधार पर प्राचीन-अर्वाचीन, दोनों प्रकार के श्रीवत्स मान्य

है। अष्टमंगल माहात्म्य (सर्वसंग्रह) ग्रंथ में इस संबंध में अनेक फोटोग्राफ सहित विस्तारपूर्वक विचारणा की गई है। जिसको जो स्वरुप में करना है, वो उस स्वरूप में कर सकते है।

दीपावली में चोपडापूजन में 'स्वस्तिश्री' लिखने की परंपरा जो है, वह प्रथम दो मंगल स्वस्तिक और श्रीवत्स के सूचक है। स्वस्ति सर्वत्र मंगल का और श्री, सुख-समृद्धि का प्रतीक है ।

3. नंद्यावर्त

हे प्रभु ! आपकी भक्ति के प्रभाव से, भक्त के जीवन में सर्व प्रकार से सुख-समृद्धि के आवर्तों की रचना होती है, ऐसा सूचितार्थ नंद्यावर्त सब को सुखकारी हो।

3.1 अष्टमंगल का तीसरा मंगल है नंद्यावर्त या नंदावर्त।

नंदि+आवर्त=नंद्यावर्त, नंद+आवर्त=नंदावर्त।

नंदि अथवा नंद अर्थात् आनंद, सुख, प्रसन्नता। आवर्त अर्थात् घुमाव, भँवर, वर्तुल, फिर से आना-होना।

नन्दिजनको आवर्तो यंत्र-नंद्यावर्तः ।

जिसमें आनंद-कल्याण के आवर्त है वह नंद्यावर्त।

जिसके द्वारा जीवन में दुःख के वर्तुल में से बाहर निकल कर सुख के आवर्तन की रचना होती है वह नंद्यावर्त।

जिसके द्वारा सीमातीत आनंद की प्राप्ति हो वह नंद्यावर्त।

18वें अरनाथ भगवान का लांछन है नंद्यावर्त।

अंजनशलाका-प्राणप्रतिष्ठाविधान का सब से प्राचीन-प्रभावक-महत्त्व के पूजन का नाम है नंद्यावर्त।

उँगली के पोर पर नंद्यावर्त आकार में जाप भी किए जाते है।

हमारे यहां नंद्यावर्त के दो स्वरुप प्रचलित है।

11वीं सदी के बाद नंद्यावर्त का अर्वाचीन स्वरुप देखा जाता है। उसके पूर्व प्राचीन नंद्यावर्त प्रचलित था।

3.2 अर्वाचीन नंद्यावर्त :

स्वस्तिक का ही एक विशेष विकसित स्वरुप जिस में नौ कोनेकी संकल्पना है, वह है अर्वाचीन नंद्यावर्त। आबु-देलवाडा तथा कुंभारीया के प्राचीन मंदिरों में वह सबसे पहले देखा जाता है। 18-19वीं सदी के मंदिरों में रंगमंडप की फ्लोरींग में ज्यादातर मध्य में अर्वाचीन नंद्यावर्त किया गया है। उदा. अमदावाद का शेठ हठीसिंह का देहरा।

नंद्यावर्त के नौ कोने को नवनिधि के प्रतीक मानें गयें हैं। नंद्यावर्त में स्वस्तिक के चार छोर घुमाव ले कर बाहर निकलते है। चार गतिरुप संसार भँवरों से भरा हुआ है, उसमें से प्रचंड पुरुषार्थ के द्वारा बाहर निकलने का संदेश नंद्यावर्त देता है।

3.3 प्राचीन नंद्यावर्त :

'नंद्यावर्तो महामत्स्यः'- ऐसा कहते हुए कोशग्रंथो में नंद्यावर्त को महामत्स्य की उपमा दी गई है। प्राचीन नंद्यावर्त की सभी चार भुजा-बाजूओं मछली के उत्तरांग अर्थात् मुख के पीछे के भाग जैसी बताई गई होने से प्राचीन नंद्यावर्त की यह उपमा सार्थक होती है।

कोशकारों नंद्यावर्त को जलचर महामत्स्य या अष्टापद या मकडी अथवा 'तगर' के फूल की आकृति समान गिनते है। 'अष्टापद' नाम के पशु के पाद(पाँव)या पंखुडीयाँ घुमावदार होने के कारण, वह उपमान के आधार पर प्राचीन नंद्यावर्त के स्वरूप का निर्णय कर सकते है। प्राचीन साहित्यिक उद्धरणों के आधार पर नंद्यावर्त का प्राचीन स्वरूप हमने दर्शाया है।

मथुरा के कंकाली टीला की खुदाई के समय प्राप्य जैन आयागपट्टो में तथा अन्यत्र भी प्राचीन में जहाँ अष्टमंगल का उत्कीरण किया गया है उसमें प्राचीन नंद्यावर्त देखा जाता है। मथुरा के आयागपट्ट में नंद्यावर्त के प्राचीन स्वरुप का स्पष्ट और सुंदर स्वरूप देखने को मिलता है।

2000 वर्ष प्राचीन नंद्यावर्त आयागपट्ट

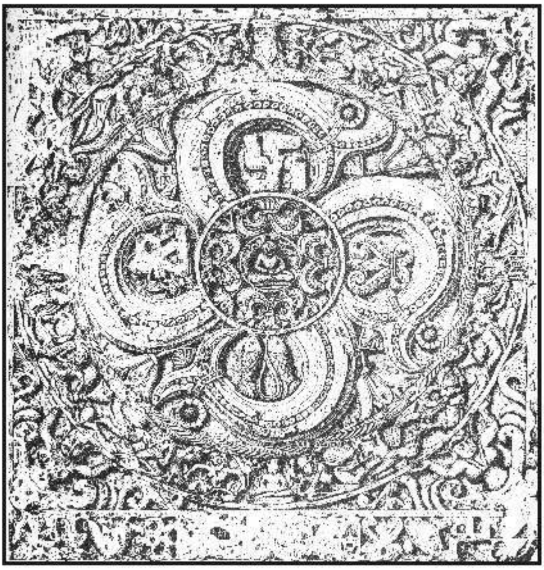

3.4 नंद्यावर्त मान्यता :

श्री श्वे.मू.पू. जैन संघ में प्राचीन साहित्य के शास्त्रपाठ और शिल्पकला संदर्भ में प्राचीन-अर्वाचीन, दोनों प्रकार के नंद्यावर्त मान्य है। अष्टमंगल माहात्म्य (सर्वसंग्रह) ग्रंथ में इस संबंध में फोटोग्राफ्स सहित विस्तारपूर्वक विचारणा की गई है। जिसको जो स्वरूप करना हो वो वह कर सकता है।

4. वर्धमानक

हे प्रभु ! उर्ध्वाधः दोनो दिशामें उपर से नीचे आता और नीचे से बढ़ कर उपर तरफ जाता वर्धमानक सूचित करता है कि जीवों को जगत में आपकी कृपा से ही पुण्य, यश, अधिकार, सौभाग्य इत्यादि बढ़तें रहतें हैं।

4.1 अष्टमंगल का चौथा मंगल है वर्धमानक।

वर्धते इति वर्धमानकः।

जो दशो दिशामें वृद्धि प्राप्त करें वह वर्धमानक।

जो वृद्धि करें, समृद्धि करें वह वर्धमानक । वर्धमानक अर्थात्

शरावसंपुट। मिट्टी के कोडिय पर दूसरा कोडिय उलटा रखने से शरावसंपुट बनता है। जिसमें नीचे के कोडिय में रखी चीज़ सुरक्षित बनती है।

देवलोक के सिद्धायतनो में शाश्वत जिनप्रतिमा के आगे स्थायी जिनपूजा के उपकरणों में वर्धमानक भी होता है। पूजा संबंधित सुगंधि चूर्ण आदि द्रव्य रखने में उनका उपयोग होता है।

4.2 व्यवहार में वर्धमानक :

उपर और नीचेका कोडिय सरक न जाय, इसलिए उसे नाडाछड़ी से बांध कर उपयोग में लिया जाता है।

जिनबिंब का जिनालय या गृहप्रवेश में, दीक्षार्थी के गृहत्याग में, नववधू के गृहप्रवेश में शरावसंपुट को देहली पर रख कर उसे तोड़ कर प्रवेश किया जाता है। अंजनशलाका विधान में भी शरावसंपुट का प्रयोग होता है।

5. भद्रासन

हे प्रभु ! देव-देवेन्द्रो द्वारा पूजित और अचिंत्यशक्ति-प्रभाव संपन्न आप के चरणों के अत्यंत निकट स्थित भद्रासन, आपके गुणों के आलंबन से सर्व के लिए कल्याणकारी होने से, आपके आगे आलेखित करतें हैं।

5.1 अष्टमंगल का पाँचवां मंगल है भद्रासन।

भद्र यानी कल्याणकारी, मनोहर, देखते ही पसंद आ जाएं इतना सुंदर; आसन अर्थात् बैठने का स्थान-पीठिका। श्रेष्ठ सुखकारी सिंहासन को भद्रासन कहा जाता है।

भद्राय लोकहिताय आसनम् - भद्रासनम्।

लोककल्याण हेतु बनाया गया राजा का आसन यानी भद्रासन।

तीर्थंकर भगवंतो के अष्टप्रातिहार्य में भी सिंहासन की गणना

होती है। दिगंबर मत अनुसार तीर्थंकरों की माता को आनेवाले 16 स्वप्न में एक स्वप्न सिंहासन है। सिंहासन चौरस या लंबचौरस ही बनाना चाहिए, गोल या अष्टकोण नहीं।

बहुत सारे जिनालयों में धातुप्रतिमा को प्रक्षाल आदि के लिए जो छोटी अलंकृत चौकी देखतें हैं, उसे भद्रासन बोल सकते है। उसे छत्र भी करतें हैं।

आगमो में अनेक स्थानों पर विशिष्ट सुंदर रचना वाले भद्रासनों का वर्णन किया गया है। परम पवित्र श्री कल्पसूत्र में स्वप्न-लक्षण पाठको फलादेश कहने के लिए राजसभा में पधारतें हैं, तब सिद्धार्थ राजा त्रिशलादेवी के लिए सुंदर भद्रासन वहां पर रखवाते है इसका वर्णन है। ऐसे ही चौथे लक्ष्मीदेवी के स्वप्न में भी सेंकडों भद्रासनों की बात की गई है।

6. पूर्ण कलश

हे प्रभु ! तीनो भुवन में और स्वकुल में भी आप पूर्ण कलश के समान उत्तमोत्तम हो, इसलिए आपके आगे पूर्ण कलश आलेखित किया जाता है।

6.1 अष्टमंगल का छट्ठा मंगल है कलश :

प्रभु की माता को आये हुए 14 स्वप्न में नौवाँ स्वप्न पूर्ण कलश है। तथा उन्नीसवें श्री मल्लिनाथ भगवान का लांछन भी कलश-कुंभ ही है।

शुद्ध निर्मल जल भरा हुआ पूर्ण कलश विशेष रूप से मांगलिक गिना गया है। जल के साथ उसका साहचर्य होने के कारण यह मंगल जल तत्व संबंधित भी मान सकते है। प्रत्येक धर्म-संप्रदाय में देवस्नान के लिए पूजा की सामग्री में कलश जरूर होगा ही। अनेक मंगल विधिओं का प्रारंभ जलभृत्-कलश से होता है। जलपूर्ण कलश में लक्ष्मी का वास माना गया है।

जिसकी हीरा-रत्नजडित कमलाकार बैठक-ईंडुरी(ईंढोणी) हो,

ऊदर के भाग पर विविध मांगलिक चिह्न-आकृति का आलेखन किया गया हो, कंठ पर पुष्पमाला धारण की गई हो, आसोपालव वृक्ष के 5-7 पर्ण रख कर श्रीफल स्थापित किया गया हो ऐसा शुद्ध निर्मल जल से भरा, सोना-चाँदी-ताम्र या मिट्टी का कलश अथवा उसकी आकृति, पूर्ण कलश स्वरुप में जानें।

6.2 विविध शास्त्रों में मंगल कलश :

अनेक जैनागमो में राज्याभिषेक या दीक्षा के समय स्नान अवसर पर सुवर्ण, चाँदी आदि अनेक प्रकार के मांगलिक कलश का उल्लेख देखने को मिलता है।

श्री तीर्थंकरदेवो के जन्मकल्याणक उत्सव अवसर पर देवताएं सुवर्ण इत्यादि आठ जाति के प्रत्येक हजार कलश द्वारा कुल 1 करोड़, 60 लाख बार बाल प्रभु का अभिषेक करते है। इन कलशों के योजन का नाप हमें आश्चर्यचकित कर देने वाला है।

शांतिस्नात्र या अंजनशलाका जैसे महत्व के विधानों में सब से पहली विधि कुंभ स्थापन की होती है।

6.3 शिल्पकला में कलश :

हस्तप्रतो में कलश

जिनालयों में परिकर में जिनप्रतिमा के छत्र पर जन्मकल्याणक का शिल्प होता है, जिस में हाथ में कलश धारण किये गए देव होते है।

मंदिर में शिखर की चोटी पर आमलसारा की उपर मंगल कलश की स्थापना की जाती है।

कुछ शिखरों की रचना में शिखर के चार कोने पर सीधी लाइन में क्रमसर कलश का शिल्प किया जाता है, जिसे 'घटपल्लव'कहा जाता है। मंदिर के स्तंभों में भी ऐसी ही रचना होती है।

6.4 कलश का प्रतीकार्थ :

(1) कलश पूर्णता का प्रतीक है।

जिनालय निर्माण में अंत में पूर्णाहुती स्वरुप में शिखर पर कलश(ईंडु) चढ़ाया जाता है।

हस्तप्रतो में ग्रंथ पूर्ण हो जाने के बाद लेखपाल अंत में कलश का चित्र दोरतें थे।

श्रीपाल राजा का रास, स्नात्रपूजा इत्यादि अनेक रचनाओं में पूर्णाहुति के बाद, अंत में 'कलश' स्वरुप में पद्यरचना होती है, जो आनंद की अभिव्यक्ति है।

(2) आनंदघनजी, चिदानंदजी इत्यादि अनेक योगीपुरुषों ने मानवशरीर को घट(कलश) की उपमा दी है।

(3) जल के गुणधर्म शीतलता, पवित्रता और शांति प्रदान करना है। जलपूर्ण कलश के ध्यान से आत्मा को इन गुणों की प्राप्ति सहज होती है।

मंत्र अनुष्ठानके षट्कर्म में प्रथम शांतिक कर्म मे कुंभस्थापनादि का समावेश होता है।

7. मत्स्य

हे प्रभु ! आपने कामदेव पर संपूर्ण विजय प्राप्त किया है, इसलिए उसने अपनी धजा आपके चरणों में समर्पित कर दी। इस धजा में मत्स्य का चिह्न था, इसलिए प्रभु ! आपकी समक्ष मत्स्यमंगल का आलेखन करता हूं।

7.1 अष्टमंगल का सातवाँ मंगल है मत्स्य-मीन-मछली।

जहाँ भी मंगल का आलेखन हुआ है वहाँ पर दो मछली का साथ में ही हुआ है। इसलिए इस मंगल को मीनयुगल अथवा मीनमिथुन भी कहा जाता है।

माद्यन्ति लोकोऽनेनेति मत्स्यः।

जिससे लोक प्रसन्न हो वो मत्स्य।

मीनयुगल सुख और आनंद का प्रतीक होता है। दिगंबर

मतानुसार तीर्थंकरों की माता को आनेवाले 16 स्वप्नों में एक स्वप्न मीनयुगल का भी है।

दो मछलियाँ परस्पर सन्मुख होती है तथा परस्पर विमुख होती है, इन दोनों स्वरुपों में उसे देखा जाता है।

7.2 मीनमंगल विशेष :

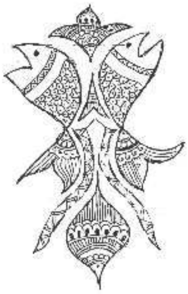

ज्योतिष की 12 राशिओं में 12वी राशि मीन है। सामुद्रिक शास्त्र अनुसार हस्त या पैरे के तलवेमें मत्स्य का चिह्न शुभ माना जाता है।

यात्रा की शुरुआत में मीनयुगल का दर्शन शुभ सगुन स्वरुप गिना जाता है।

मीन, सच्चे प्रेम का प्रतीक है। जल और मीन का सच्चा प्रेम लोकसाहित्य में प्रशंसनीय है।

मछली सदा जलप्रवाह से विपरीत दिशा में गति करती है। अतः जापाने में प्रगति के प्रतीक एवं आदर्श के रुप में मछली का चिह्न द्वार पर लटकाया जाता है।

८. दर्पण

हे प्रभु ! दर्पण में प्रतिबिंबित आपका प्रतिबिंब मुझे भी मेरा, आपके जैसा ही स्वरूप याद करायें ऐसी भावना से आपकी समक्ष दर्पण के आलेखन द्वारा धन्य होता हूं।

8.1 अष्टमंगल का आठवाँ और अंतिम मंगल है दर्पण।

दर्पं नाशयति इति दर्पणः।

जो अहंकार-पाप स्वरुप 'दर्प' का नाश करे वह है दर्पण।

शास्त्रों में दर्पण को आयुष्य, लक्ष्मी, यश, शोभा और समृद्धि का कारक कहा गया है।

दर्पण निर्मल ज्ञान का प्रतीक स्वरुप होने के कारण आत्मज्ञान का भी सूचक है।

देवलोक में शाश्वत जिनप्रतिमा समक्ष स्थित पूजा की स्थायी सामग्री में दर्पण होता है। प्रत्येक जिनालयों में दर्पण पूजा के उपकरण स्वरुप दर्पण अवश्य देखने को मिलेगा। श्री तीर्थंकर देवो के जन्म समय पर 56 दिक्कुमारिका के सूतिकर्म में 8 दिक्कुमारिका प्रभु और माता समक्ष मंगल दर्पण ले कर खडी रहती है।

8.2 दर्पण दर्शन प्रभाव :

दर्पण दर्शन शुभ सगुन स्वरूप होने के कारण, दर्पण देख कर यात्रा की शुरुआत करना मंगलदायक है।

जिनालयों में जहाँ मूलनायक परमात्मा को द्रष्टिरोध होता हो, उसे दूर करने के लिए भी द्रष्टि के समक्ष दर्पण रखा जाता है।

18 अभिषेक विधान में 15वाँ अभिषेक के बाद जिनबिंबो को दर्पण दर्शन करवाने का विधान प्राचीन प्रतिष्ठाकल्पों में कहा गया है। वर्तमान में होते 18 अभिषेक में भी चन्द्र-सूर्य के दर्शन के बाद दर्पण दर्शन भी कराना होता है। दर्पण दर्शन के द्वारा, नेगेटीव ऊर्जा दूर करने का प्रयोजन 18 अभिषेक विधान में है।

जय जय होजो-मंगल होजो।
जैन संघ का मंगल होजो।
विश्व मात्र का मंगल होजो।

सर्व साधारण द्रव्य की वृद्धि के कर्तव्य के बारे में, आप के श्री संघ में, परिस्थिति के अनुसार, निम्नलिखित चढ़ावा-बोली कर शकते है एवं उसकी आवक में से जीवदया-अनुकंपा को छोडकर अन्य सर्व खर्च हो सकता है।

(A) पर्युषण पर्व में बोले जाते/बोल सकते है ऐसे चढ़ावें :

1. आठ अष्टमंगल के पूज्य एवं भावमंगलरुप सकल श्री संघ को दर्शन कराने के 8 चढ़ावें(ऐसे ही, सकल श्री संघ को दर्शनार्थे अष्टमंगल अर्पण करने का भी 8 चढ़ावा दे सकते है)।
2. ध्रुवसेन राजा बन कर कल्पसूत्र श्रवण करने का चढ़ावा।
3. संवत्सरी के दिन व्याख्यान के बाद सकल श्री संघ को सर्व प्रथम मिच्छा मि दुक्कडम् देने का चढ़ावा।
4. एक साल के लिए संघश्रेष्ठी/संघमोभी बनने का चढ़ावा,(चढ़ावा लेनेवाले का 1 साल के लिए पीढ़ी पर(या अनुकूल स्थान पर)नाम लगे, पूरा साल श्री संघ द्वारा होते बहुमान उनके हाथसे हो...इत्यादि सोच सकते है।
5. बारह मास के 12 या 15 दिन का एक ऐसे 24 सर्व साधारण के चढ़ावें।
6. पूर्व के प्रभावक राजा-मंत्री-श्रेष्ठी जैसे कि, कुमारपाल, वस्तुपाल, तेजपाल, जगड्डुशाह इत्यादि की प्रतिमा बना कर उनका बहुमान करने का चढ़ावा।
7. जन्म वाचन के दिन
   a. श्री संघ का गुमाश्ता (महेताजी) बनने का चढ़ावा।
   b. श्री संघ को गुलाबजल से अमीफुहार (अमीछांटणा) करने का चढ़ावा।
   c. जाजम बिछाने का चढ़ावा।
   d. कोई भी चढ़ावा लेने वाले का बहुमान-तिलक करने का चढ़ावा।

e. श्री संघ को कल्पवृक्ष का दर्शन कराने का चढ़ावा।

f. शालिभद्र मंजूषा (पेटी) (3, 9, 11...पेटी उतारने का चढ़ावा)(पेटी लाभार्थी घर ले जाता है)।

(B) नये साल कार्तिक सुदि-1 के दिन बोली लगा सके ऐसे चढ़ावें :

1. श्री संघ को सब से पहले नूतनवर्षाभिनंदन कहने का चढ़ावा।
2. श्री संघ की पीढ़ी सब से पहले खोलने का चढ़ावा।
3. श्री संघ में सब से पहले रसीद कटवाने का चढ़ावा।
4. उपाश्रय को या घर-घर आसोपालव के तोरण बाँधने का चढ़ावा।
5. सकल श्रीसंघ पर अमीफुहार(अमीछांटणा) करने का चढावा।

(C) चातुर्मास में साधारण खाते के चढ़ावें :

1. चातुर्मास प्रवेश के अवसर पर उपाश्रय के द्वार-उद्घाटन का चढ़ावा। (चारों या बारह मास की आराधना का लाभ मिलेगा)।
2. तप का बियासणां-पारणा-अत्तरवायणा या तपस्वीओं के बहुमान जैसे कि दूध से पग धोना-तिलक-हार-साफा या चूनरी-शाल-श्रीफल-सन्मानपत्र अर्पण करने का चढ़ावा।
3. तप उजमणा में तपस्वीओं के सामुदायिक वरघोडे में बग्गी इत्यादि का चढ़ावा।
4. शालिभद्र, पुणिया श्रावक, 16 उद्धारक, कनकश्री इत्यादि का बहुमान करने का चढ़ावा।
5. चातुर्मास प्रवेश के सामैये (वरघोडे) या तपस्या के वरघोडे में अष्टमंगल लेकर चलनेके 8 चढ़ावें।

(D) दीक्षा :

1. दीक्षार्थी का बहुमान जैसे कि दूध से पग धोना-तिलक-हार-साफा या चूनरी-शाल-श्रीफल-सन्मानपत्र अर्पण-वधामणा, बिदाई तिलक करने का अलग-अलग चढ़ावा।
2. दीक्षार्थी को दीक्षा की विधि में चरवलो-कटासणुं-मुहपत्ती अर्पित करने की बोली(क्रिया के बाद बोली लेने वाले को चरवला आदि उपकरण मिलते है)।

3. दीक्षार्थी के वरघोडेमें अष्टमंगल के 8 चढ़ावें।
4. दीक्षा के दिन दीक्षामंडपमें प्रवेश के समय दीक्षार्थीको शुभसगुन-मंगलकारक 8 मंगल के दर्शन करवाने के चढ़ावें।
5. दीक्षार्थी के माता-पिता का बहुमान करने का चढावा।

(E) छ 'रि' पालक संघ :

1. संघपति को बहुमान, जैसे कि दूध से पग धोना-तिलक-हार-साफा या चूनरी-शाल-श्रीफल-सन्मानपत्र अर्पण आदि करने का चढ़ावा।
2. संघ नीकालनेवाले को 'संघवी' पद जाहिर करने का चढावा।

(F) शासनस्थापना (बैसाख सु.11) के दिन उपाश्रय की छत पर शासनध्वज फहराने का चढ़ावा।

(G) महोत्सव संबंधित साधारण का चढ़ावा।

1. साधर्मिक भक्ति, नवकारसी, भोजन इत्यादि का नकरा या चढ़ावा।
2. फले चुनरी या झांपा-चुनरी की आमदनी।
3. कुमकुमपत्रिका में लिखितं-प्रणाम-जय जिनेन्द्र लिखने का चढ़ावा।
4. धार्मिक महोत्सव या व्याख्यान के लिए मंडप पर नामकरण का चढ़ावा।

(H) श्री संघ की साधारण आय-व्यवस्था :

1. संघ सदस्यता का चढ़ावा।
2. सर्वसाधारण फंड-टीप-कायमी तिथि।
3. साधारण के भंडार की आमदनी।
4. तसवीर-तकती इत्यादी स्कीम की आमदनी।
5. पीढ़ी का मकान-दरवाजा इत्यादि के उपर नाम लिखने का चढ़ावा इत्यादि की आमदनी।
6. अपने जन्मदिन पर 100,200,500 रु. साधारण खाते में लिखवाना।

(I) Extra :

1. संघ प्रमुख को तिलक करने का चढ़ावा।
2. जो तो अवसर पर उपाश्रयोमें कंकु-थापा करने का चढावा।
3. महापूजा आदि जो तो अवसर पर श्रीसंघ के सभ्यो का (1) दूध से पग धोना, (2) तिलक करना, (3) बादला लगाना,

(4) प्रभावना देना, (5) गुलाबजल का छिंटकाव करना आदि के चढावें।

4. नूतन उपाश्रय के भूमिपूजन-खनन-शिला स्थापना का चढावा। (रकम उपाश्रय खाते में जाती है और अधिक बचत सर्वसाधारण खाते में ले जा सकते है।)

(J) देव-देवी संबंधित चढावें :

1. स्वद्रव्य निर्मित जिनालय में अथवा साधारण द्रव्य की भूमि एवं साधारणद्रव्य निर्मित देरी आदि में जो तो भगवान के यक्ष-यक्षीणि एवं अन्य श्री माणिभद्र देव आदि देव-देवी आदि की

   1. प्रतिमा भरवाने का चढावा
   2. प्रतिष्ठा करवाने का चढावा
   3. उनके आगे रखे हुए भंडार की आवक
   4. देव को खेस एवं देवी को
      चूनरी चढाने का नकरा या चढावा
   5. देव-देवी आरती के चढावें

   नोंध: देव-देवी का मंदिर-देरी की भूमि एवं उनकी देरी का निर्माण, ये दोनों साधारण द्रव्य से बने हुए जरुरी है। दोनों या एक भी यदि देवद्रव्य से बने हो तो उनकी आय देवद्रव्य में जाती है।

2. देव-देवी संबंधी साधारण की आय का उपयोग श्रावकों को प्रभावना देने या साधर्मिक वात्सल्य में करना अनुचित समझा जाता है एवं यह रकम जीवदया एवं अनुकंपा में भी उपयोग नही कर सकते है।

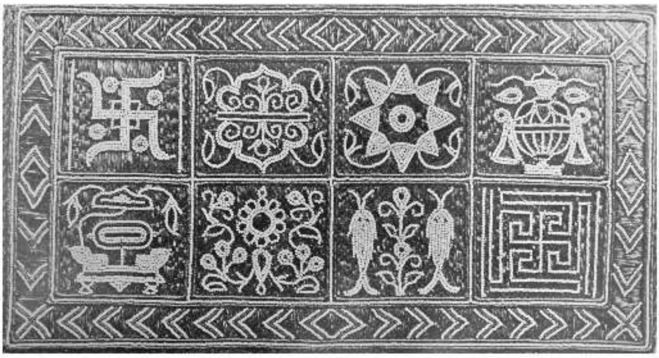

बारीक मोती से गूंथे गये अष्टमंगल

परम श्रेष्ठ आकार स्वरुप में देवलोक में शाश्वतरुपमें स्थित एवं आगमो में दर्शनीय रुप में परम सन्माननीय कहे गए अष्टमंगलों का पर्युषणा पर्व इत्यादि जैसे पवित्र महान दिनों में संघोपक्रमे सकल श्रीसंघ को दर्शन करना-कराना वो जीवन का अहोभाग्य है।

ये सर्वश्रेष्ठ मंगल, अपने जीवन को धर्म मंगलमय बनाने में कारणरुप बनें रहें, ऐसी शुभ भावना से उपचार स्वरुप उसके प्रति निर्मल सुगंधमय जल और चंदन का छिड़काव करें, पुष्प इत्यादि की माला पहनाएँ, धूप करें और जीवन को धन्य बनाएँ।

शिल्पविधि प्रकाशन

Shilp-Vidhi

जैन शिल्प विधान
(भाग-१,२)

शिल्पशास्त्रो, वर्तमान परंपरा तथा अनुभवी विद्वानो-शिल्पीओका
अनुभव के निचोडरुप शास्त्रीय शिल्पग्रंथ

जिनालय निर्माण मार्गदर्शिका
(गुज., हिन्दी)

मंदिर निर्माण और श्री संघ मे बार-बार उपयोगी ओप-लेप-चक्षु-टीका,
देव-देवीओकी स्वतंत्र ध्वजा, लेख, लांछन आदि अनेक के लिए
व्यवहारिक, स्पष्ट एवं सचोट, पारदर्शक मार्गदर्शक व्यवहारिक शिल्पग्रंथ

हेमकलिका-१
श्री अढार अभिषेक विधान

१८ अभिषेक संबंधी अनेक रहस्य, विधानशुद्धि, दृष्टांत, भक्तिगीत,
स्तुतिसभर २०० से ज्यादा प्राचीन प्रतिष्ठाकल्पानुसार संपादित विधि ग्रंथ

हेमकलिका-२
श्री धारणागतियंत्र

जो तो संघ या व्यक्ति के लिए संघ या गृह मंदिरमें कौन से भगवान
पधराना ज्यादा लाभदायी है, यह निश्चिंत करने हेतु कोष्टक स्वरुप ग्रंथ

शाश्वत जिन प्रतिमा स्वरुप

आगम ग्रंथो के अनुसार देवलोक में स्थित
शाश्वत जिन प्रतिमा का सचित्र वर्णन

Coming Soon

हेमकलिका-3
जिनालय निर्माण विधिविधान

मंदिर निर्माण के प्रारंभ से अंत तक करने के
सभी शिल्प शास्त्रोक्त सर्व विधान...

ध्वजा संहिता

मंदिर के शिखर पर शोभित ध्वजा के संदर्भ में
अनेकविध नूतन माहितिसभर रेफरन्स ग्रंथ

श्री बृहद् धारणायंत्र एवं
श्री धारणागति यंत्र (हिन्दी)

वि.सं. 2072 के ऐतिहासिक श्रमण संमेलन के
सर्वमान्य प्रस्ताव नं 48 अनुसार,
समग्र भारत के तपागच्छीय श्रीसंघोमें
साधारण द्रव्य की वृद्धि के कर्तव्य संबंधित,
पर्युषणा पर्व के महान पवित्र दिनो में,
आगमो में श्रेष्ठ दर्शनीय कहे गए
अष्टमंगल के दर्शन की बोली का
शुभारंभ हो रहा है, यह पुनित प्रसंग पर...

अष्टमंगल महिमा वर्णक प्रस्तुत पुस्तिका प्रकाशन के

लाभार्थी गुरुभक्त

हार्दिक पटवा
आकाश शाह

Patwa and Shah
Chartered Accountants

203, Eternia Complex, 74 - Swastik Society,
Above Indian Bank, Navrangpura,
Ahmedabad-09